स्वीकार



निम्न लिखत सद्‌ गृहस्थोंकि तर्फसे इस सस्थाको द्रव्य सहायता मीलनेसे धन्यवादके साथ सहर्ष स्वीकार करनेमें आति है.

६१) शाहा ममिरांमजी सूरजमलजी द्वारा ' कस्तुरबाई ' रावगढवालोंकी तर्फमे

५१) शाहा सीवलालजी पुनमचन्दजी कोचर फलोधी-वालोकी तर्फसे,

२५) शाहा गमीरमलजी माणकमलजी हींगणघाटवालोंकि तरफसे सुहारमलजी भावकद्वारा.

अन्य सज्जनोंको भी इस्का अनुकरण कर ज्ञान प्रचारमें अवश्य सहायक बनना चाहिये

प्रकाशक



श्री सोमसुन्दरसूरीके शिष्य जिनहर्षगणि कृत—

श्रीगुणानुरागकुलकं.

भाषान्तर कर्त्ता

श्रीमदुपकेशगच्छीया

मुनि श्री ज्ञानसुन्दरजी महाराज

द्रव्य सहायक,

श्री सुखसागर ज्ञान प्रचारक सभा-लोहावट

प्रकाशक,

श्री जैन नवयुवक मित्रमंडल

मु लोहावट—जाटावास (मारवाड)

प्रथमावृत्ति १००० विक्रम संवत १९८०

॥ श्री ज्ञानपञ्चमीने नमः ॥

आजका दिन मुबारिक हो।

आज ज्ञानपञ्चमीका दिन है यह बड़े नगरोंमें आज ज्ञानका महोत्सव निमित्त ज्ञान कोठडीयों बन्धी है भंडारोंसे ज्ञानपुस्तकें उच्चासनपर पधराये गये हैं ज्ञानकी पूजा, ज्ञानकी प्रभावना, ज्ञानाराधनार्थ मुनिमहाराज आज ज्ञान विषयक व्याख्यान दे रहे हैं श्रोताजन ज्ञानपूजाके साथ ज्ञान श्रवण कर रहे हैं सुहागण बहनों सुन्दर वस्त्राभूषण पहरके ज्ञानकी गहुलीयों कर रही है आचार्योपाध्यायजी महाराज अपने शिष्यमंडलको नये नये आगमोंकी वाचनाका प्रारंभ कर रहे है ज्ञानाभिलाषी शिष्यमन्डल नये नये ज्ञान कण्ठस्थ करना शरू कीया है केइ लोगोंने नये नये ग्रन्थ पढना प्रारंभ किया है केइ ज्ञानप्रेमी आगम श्रवण केइ ज्ञान अनुमोदन कर रहे है केइ ज्ञानोपासक अष्टद्रव्यसे थाल भर भर पूजाकी सामग्री ला रहे है केइ पांच ज्ञानकी पूजा भणा रहे है केइ प्रभुकी आंगी रच रहे है इत्यादि आजका दिन ज्ञान आराधनमें प्रधान है इस सुअवसरपर मेरे जैसे बालजीवोंको भी कुच्छ न कुच्छ ज्ञानाराधन अवश्य करना चाहिये जिनसे स्वपरात्माओंका कल्याण हो इस विचारके निर्णय करते हुवे आज मेरी यह भावना हुइ कि मोक्षमार्ग साधन करनेका अनेक कारण है जैसे सामायिक प्रतिक्रमण पूजा, प्रभावना दान शील तप भाव क्षमा, दया, संतोष, त्याग वैराग, निर्लोभता यम नियम आसन समाधी ज्ञान ध्यान इत्यादि परन्तु इन सब कारणोंके अन्दर माला हुवा असाधारण कारण जो कि दुनियों सुखपूर्वक धारण कर कल्याण कर सके जिसका नाम है 'गुणानुराग' उत्तम गुणोंपर जिन भव्य जीवोंका अनुराग है उनके अन्दर हजारों गुण सता ही प्रवेश हो सक्ते है इस लिये आत्मकल्याणका प्रथम मंगलाचरण 'गुणानुराग' है यह अपूर्व ग्रन्थ पूर्व महा ऋषियोंने मागधी भाषामें सकलीत कीया था इस भाषाको निस्पत् प्रचलीत भाषामे जनता अधिक लाभ उठा सके इस इरादासे इन मूल ग्रन्थके साथ प्रचलीत हिन्दी भाषा कर ज्ञानपदकी आराधना करना हमारा कर्तव्य समज स्व-पर आत्माका कल्याणके लिये ही इस कार्यको ज्ञानपंचमीको प्रारंभ किया है शम्.

मुनि ज्ञानसुन्दर—लोहावट.

श्री रत्नप्रभ सूरीश्वर सद्गुरुभ्यो नमः

अथश्री

गुणानुराग कुलक

सयल कल्लाण निलयं । नमिऊण तित्थनाह पय कमल ।
परगुण गहण सरुव भणामि सोहग्गसिरि जणय ॥ १ ॥

अर्थ—सकल कल्याण के निवास स्थान, तीर्थ के नाथ तीर्थंकर भगवान वीर प्रभु—कैवल्यज्ञान कैवल्यदर्शन धारक सर्वज्ञ वीतराग जिन केवल अरिहन्त अनन्तज्ञान–दर्शन–चारित्र–तप–वीर्य–दान–लाभ–भोग–उपभोग–वीर्यवन्त अनन्तदायक गुण के धारक त्रिलोक्य पूजनीय त्रीलोक्यनाथ, त्रीलोक्यतात त्रीलोक्यभ्रात त्रीलोक्यचन्द्र त्रीलोक्यसूर्य त्रीलोक्यदयाल त्रीलोक्यमयाल त्रीलोक्यप्रतिपाल त्रीलोक्यजान त्रीलोक्यज्ञानी त्रीलोक्यध्यानी त्रीलोक्यदानी त्रीलोक्यपंडित त्रीलोक्यमंडित त्रीलोक्यज्ञानदीपक त्रीलोक्यभापक त्रीलोक्यमिथ्यानिमग्नासक्त त्रीलोक्यमोहजीपक जगताधार जगत्लोचन जगत्दु खमोचन जगतहेतु जगत्सेतु जगतेश्वर जगत्में जाज समान महामहाण महाजाण महाआचारी महाब्रह्मचारी महातपस्वी महाज्ञानी–ध्यानी–दानी महागोप महासावत्थवहा महाकृपाल महाकरूणासागर परमनियामक परमइष्ट परमिष्ट परमवेदी परमगारूडी परमज्योति परमकान्ती परमशांति परमोपकारी परमक्षमावन्त परमनिर्लोभी परमत्यागी परमपरमातमा अक्रोधी

अमानि अमायि अलोभी अरागी अद्वेषी जितन्द्रिय सुमति गुप्ती प्रतिपन्न अरिहन्तदेव जिनश्वरदेव वीतरागदेव मुनीन्द्रदेव देवेन्द्रदेव नागेन्द्रदेव असरणमरण अतरण तारण अनाथनाथ दीनोद्धारक चौतीस अतिशय पैंतिसवाणिगुण अष्टमहाप्रतिहार संयुक्त इत्यादि अनन्तगुण धारक तीर्थंकर भगवान के चरण कमलों को अन्दर एक हजार आठ वार वन्दन नमस्कार कर परगुण ग्रहन करने का स्वरूप अर्थात् दूसरा कोई भी गुणीजन जिस्के अन्दर कीसी प्रकारका सामान्य या विशेष गुण हो उस गुण कों सद्बुद्धि द्वारा ग्रहन करनेका स्वरूप में इस ग्रन्थ द्वारा कहूंगा पूज्यपाद श्री सोमसुन्दर सुरीजी महाराजका गुणग्राही जिनहर्षगणि नामका शिष्य कहता है कि हे देवाणुप्रिय सौभाग्य श्री याने अक्षय सौभाग्य जो मोक्षरूपी स्थान, प्राप्ति के लिये इस ग्रन्थकी रचना कर गुण ग्रहन रूपी मोक्ष साधन कारण कहुगा, हे भव्य जीवों ! अगर तुम लोग अपनि आत्मा का कल्याण करना चाहाते हो तों मोक्षका प्रथम साधन कारण गुणग्रहीपन कों धारण करो इस्में नतो कष्टोपार्जन करना पडता है न द्रव्य खरच करना पडता है मात्र पहलेसे ही अपना लक्षकों गुण ग्राहकता कि तर्फ लगा देना चाहिये गुणग्राही पुरुषों कि इस भवमे भी दुनियों तारीफ करती है परभवमे भी वह जीव सहजहीमे अनेक गुण प्राप्त कर अक्षय पदकों अपने आधिन कर लेता है ।

॥ कुण्डलियो ॥

गुनग्राही बनीये सदा लागत नहीं कुच्छ मोल ।
अवगुन जोव आपना पामे गुन अनतोल ।

पामे गुन जनतोल जगतमें लोक सरावे ।
परभव सुरअवतार आखीर वह शिवपद पावे ।
कहत कवि कर जोग ज्ञानकि वातें सुनिये ।
लागत नहीं कुच्छ मोल, गुन के ग्राहक बनिये ॥ १ ॥

उत्तम गुणाणु राओ–निवसइ हिययमि जस्स पुरिसस्स ।
आतित्थ यर पयाओ, न दुल्हा तस्स रिद्धिओ ॥ २ ॥

अर्थ—जिस पुरुषों के हृदय कमल मे उत्तमगुणी जनोंक गुणोंका अनुराग सदैव निवास करता हो उस पुरुषका हृदय मानो हजारों गुणोंका एक खजाना ही है इतना ही नहीं वरकि सर्व लोकमे उचेसे उचा गुण तीर्थंकर पदका है वह तीर्थंकर पद रूपी जो ऋद्धि भी उस पुरुषके लीये किसी प्रकारसे दुर्लभ्य नही है कारण यह बात तो स्वयसिद्ध है कि मनुष्य जीस जीस गुणोंका अनुमोदन करता हो–अनुराग रखता हो वह वह गुण इस भवमें या परभवमे उसे अवश्य मीलता है जब तीर्थंकरों के उत्तम गुणोंका अनुराग रखनेवाले गुणग्राही पुरुषो को तीर्थंकर पद कि ऋद्धि मीलना कोइ दुर्लभ्य नहीं है इस वास्ते भव्य जीवोको जिस गुणकि जरूरत हो उसी गुणोपर अनुराग रख गुणी जनोंकि सेवाभक्ति गुण स्तुति उपासन कर उन गुणोंका वार वार अनुमोदन करना चाहिये जैसे एक मनुष्यको ज्ञान गुणकी आवश्यक्ता है वह मनुष्य ज्ञानी पुरुषोंकि सेवाभक्ति उपासना कर वार वार ज्ञान गुणका अनुमोदन करता हुवा अनुराग धरेंगे तो उसे ज्ञान गुणकि अवश्य प्राप्ती होगी इसी माफीक दुसरे भी हजारों

गुण अनुमोदन करनेवाले व हृदयमें ही वह सतगुण निवास करते है वहा तक कि तीर्थंकर पद की ऋद्धि भी सुलभतासे मील सकती है इस वास्ते प्रत्यक मनुष्यों कों गुनग्राही बनना चाहिये।

ते धन्ना ते पुन्ना, तेसु पणामो हविज्ज मह निच्च ।
जेसिं गुणाणुराओ, अकित्तिमो होइ अण वरय ॥ ३ ॥

अर्थ—वह पुरुष जगत् में धन्यवाद के पात्र है वह पुरुष लोकमें पुन्यशाली है अथात पूर्वभवमे जोकि अत्यन्त पुन्य कर अपने हृदय कमलकों गुणग्राही बनाया था यानि गुणग्राही पानका अभ्यास पूर्वभवसे ही कीया हुवा था कि इस भवमे भी वह पूर्वाभ्यासकि प्रेरणासे जन्मसे ही गुणग्राही बन हजारों दुर्गुणोंसे एक भी गुण हो उसे ग्रहन कर परगुण अनुरागी बन जाते है वह मनुष्य कृतार्थ है और भी पुन्योपार्जन कर अपने दुर्लभप्राप्त कीया हुवा नरभवको सफल कर रहा है जिस मनुष्योंकी भावना निरन्तर परगुण ग्रहन करनेमें लगी हुइ है एसा महान् पुरुषोंको नित्य हमारा नमस्कार हो अथात् एसे परगुणग्रहन करने वाला मनुष्य दुनियामें चीरकाल तक वन्दन नमस्कार और पूजा करने योग्य होता है। जैसे एक गामडमें एक कपील नामका साधारण मनुष्य महान् वेदना भोगव रहा था उनके कुटुम्बीयोंने बहुतसे वैद्योंको बुलवाके बडेही कोशीस व साथ दवाइ उपचार किया परन्तु उस वैद्यागने कीसीका भी गुण न लेके जीतने हकीम आयेथे उन सबने एकेक अवगुण ग्रहन कर अपना हृदयको पूर्ण भर दीया कीसीको कहा कि यह काना है कीसीको वृद्ध है कीसीको काला है कडवीदवायों देता है इत्यादि न कीसीपर

उसका विश्वास रहा इसी माफीक चीरकाल दुखोंका अनुभव करता रहा फीर एक महात्मा आया उनोसे अपनि दु खकी वात कही उन महात्मान कहा कि हे भद्र ! इस दु खमे कोइ गुण भी तुमने देखा है ? वैमारने कहा कि आप भी ठीक वात करते हो क्या दु खम भी कोइ गुण हुवा करता है ? महात्मान कहा कि तुम पहेले गुणग्राही पणा सीखों दु खम भी वडा भारी गुण रहा हुवा है जैसे कि दु खमें परमेश्वर स्मरण होता है अपने कुटुम्बीयों कि परिक्षा होती है दुष्कर्म करनेसे नफरत आति है इत्यादि अनेक गुण है वास्ते हे भद्र ! तु पेस्तर गुणग्राहीपना सीख, यह सुन वैमारने सोचा कि वात तो ठीक है उस दिनसे उन वैमारने गुणग्राहीपणा धारणकर जो मनुष्य तो क्या परन्तु हरेक वस्तु क्यो न हो उनोंमें जो गुण हो उसे ग्रहन करना सरू कीया आखीर शरीर अच्छा हुवा और जगतमे जीतनी वस्तुवो है उस्मे एकेक गुण तो अवश्य है यह सिद्धकर दीया और एकेक मनुष्यादिसे एकेक गुणको ग्रहन कर आप गुणोंका एक खजाना वन दुनियोंके सर्व उच्च स्थानको प्राप्तकर जनताके वन्दन पूजनका पात्र वन बेठा इस वास्ते प्रत्येक मनुष्योंका कर्त्तव्य है कि वह हरेक वस्तुवोंसे गुणग्रहन करे ।

कि वहुणा भणिएण, किंवा तविएण किंवा दाणेण ।
एक गुणाणुराए, सिख्खह सुख्खाण कुल भवण ॥ ४ ॥

अर्थ—कीतनेक मनुष्य एसे भी होते है कि बचपणासे ज्ञानाभ्यास करते हुवे वृद्ध वय तक पहुचजाते है और तपश्चर्या करनेमे मास

मास ग्यामयवे पारणो करते है दान दनेमें वड ही उदार होत है परन्तु परगुण ग्रहन नही करत हुवे भी दुसरोंके अवगुणोंस अपना खजाना भर लेते है कहा है कि ज्ञानका अजीरण अहंकार यानं दुसरोंको तुच्छ समान समजना तपश्चयाका अजीरण क्रोध यानं प्रज्वलीत हो दुसरोंको दवाना क्या मुझे नहीं जानत हो ? दानका अजीरण परनिंदा याने मरीचुस कृपण आदिकी निंदा करना ऐसे दुजनोंके लिये आचार्यजी फरमाते है कि हे भव्य जीवो ! जहांतक तुमारे अन्दर गुणग्राहीपणा नहीं है वहांतक तुमारा पढना लिखना आगमोंका पठन पाठन विशाल परिपदामें लम्बे लम्बे भाषणोंका देना मनोरंजक कथावोंसे दुनियोंको मोहीत करना तथा उपवासादि छैमास तककी तपश्चया करना और अनेक प्रकारके दान देना यह परगुणग्राहकता विगर सब निष्फल है कारण ज्ञान ध्यान तपश्चया और दानादि क्रिया करते हुवे भी पर अवगुणोंको ग्रहन करने कि जीस मनुष्यमें आदत पड गइ है वो सब क्रियाका फलको एक ही दुगुण वालक भस्म कर देता है इस वास्ते हे भद्र ! पहले गुणानुराग यानं परगुणग्रहण करना सीखो याने अपनि आदत पाड दो कि हरेक मनुष्यमें उत्तम गुण हो उसे ग्रहन करे कारण यह एकही गुण ऐसा जबरदस्त है कि स्वाधीन सुखोंरूपी मुलके अन्दर भुवन समान है जब सब सुखोंका भुवन ही प्राप्त करलीया तो उस सुख भुवनमें दुसरे हजारों सुख सहज ही में मील जायगा ।

जइवि चरसितव विउल, पढसि सुय करिसि विविह कहाइ ।
न धरसि गुणाणुराय, परेसुता निष्फल सयल ॥ ५ ॥

अर्थ—यद्यपि हे भद्र तु विपुल प्रकार कि तपश्चर्या करेंगे तथा आचारागादि सूत्र सिद्धान्त पढेगा, पूजन प्रतिलेखन सिरलोच आसन समाधि ध्यानादि अनेक प्रकारकी कष्ट क्रियावों करेगा परन्तु जहांतक तेरा ध्यान दुसरोंके गुणोंकी तर्फ नही है अर्थात् परगुणानुराग नही है तो तर कीया हुवा उक्त सब कष्ट निष्फल है कारण तपके गुणोंपर सूत्रसिद्धान्तके गुणोंपर और दुसर भी अनेक प्रकारके कष्ट क्रियाओंके गुणोंपर भी तो तेरा राग नहीं है अगर उक्त क्रियाओंपर राग होगा तो दुसर भी उक्त क्रियाओं करनेवालों पर भी तेरा अवश्य राग होगा ही. जब दुसर मनुष्य तपश्चर्या करनेवाले सूत्रसिद्धान्त पढनेवाले और दुसर भी अनेक गुणोंके धरन वाले पर तेरा अनुराग नही है तो फीर उक्त क्रियाओंपर तेरा अनुराग कहांस आया अगर यह कहा जाय की जो में करता हु उस कष्ट क्रियापर मेरा राग नहीं है तो वह कष्ट कैसे किया जावे ? हे भद्र यह तो परिग्रहीत क्रियाओं पर अपना मोह है उस्मे हेतु यह है कि में करता हू वह ठीक है और दुसरा करता है वह खराब है इसको गुणानुराग नही कहा जाता है इसे तो एक कीस्मका हठग्राहीपणा कहते है जैसे लाभार्थी वैपारी लोग अपने मालको अच्छा सुन्दर वतलाता हुवा उनके गुण गाते है वह ही माल दुसरे वैपारीके पास है उनके लिये अनेक दुर्गुण वतलाते है तो उस वैपारीकों उन वस्तुके गुणोपर राग नही है किन्तु अपना स्वार्थ साधन कर पैसा पैदा करनेका है इसी वास्ते दुनियोंमें अपने महत्व वढानेवाले तपश्चर्या करते है सूत्र पढते है और भी अनेक कष्ट उठाते है उस्मे मूल हेतु वह ही है कि दुनियोंमें हम दुसरसे

अधिक तारीफवाले हो दुनियोसे पूजा करवावे इत्यादि न्याय युक्त वह सब कष्ट क्रिया एक फीम्मका हठवाद है इस वास्त जो मनुष्य परगुणग्रहया विगर जो तप जप ज्ञान ध्यान करता है वह सब निष्फल है इसलिये मोक्षार्थी पुरुषोंको तपश्चर्या करते हुवे सूत्रसिद्धान्त पढ़ते हुवे भी परगुणग्रहण करनेमें अधिक प्रयत्न करना चाहिये ताकि वह किये हुवे सब कष्ट क्रिया सफलताको प्राप्त हो जैसे शृंगार कीया हुवा सुन्दर पुरुष अधिक शोभा पाता है इसी माफीक मनुष्य परगुणग्रहन करनेसे किया हुवा तप सयमादि सवकार्य अधिक शोभाको या फलको प्राप्त होते है वास्ते सुखार्थीभाइयोंको सदैव गुणग्राहीपणाही रखना चाहिये ।

सोऊण गुणुकरिस, अन्नस करसि मच्छर जइवि ।
ता नूण ससार, पराहव सहसि सव्वत्थ ॥ ६ ॥

अर्थ—ससारके अन्दर कीतनेक एसभी जीव हुवा करते है कि दुसरोंका गुण न सहन कर दुसरोंकी प्रशसा श्रवण न कर उलटे मच्छरभाव यान ईर्षा करते है उन महानुभावोंको आचार्यश्री कहेते है कि हे देवानुप्रीय ! दुसरोंके गुणोंकि प्रशसा श्रवण कर अगर तु मच्छरभाव —ईर्षा द्वेषभावलावेगा तो तु तेरी आत्माको निश्चय कर दुर्गतिके अन्दर गीरानेकाही प्रयत्न करेगा और उन खराब भावोंके कारण पर भवमें जहा जावेंगा वहाही पराभव पावेगा अर्थात् जीस गुणोंके लिये तु इसभवमें मच्छरभाव लावेगा वह गुण भवान्तरमें तेरे को मीलना मुश्किल होगा इसभवमें भी कोइ सज्जन समजदार मनुष्यके पास आके तु एक गुणीजनसे इर्षा और मच्छरभाव दरसावेगा तो वह स-

मजदार तेरी कितनी किंमत करेगा, बल्के सज्जन तो यह वस्तुनी समजलेगा कि यह परगुणद्रोही एक खल आदमी है हे भद्र! तु तेर दीलमें विचार कर कि दुसर आदमियोंके गुणोंसे इर्षा ररवनेसे तेरकों क्या फायदा है? इस भवमें तो अच्छा मनुष्य तरको पामनी नही बढावगा और तरपर विश्वासतकभी नही रखेगा परभवमें तुजे वह गुण मीलना दुष्कर होगा भले तु कीमीसे ईर्षाद्वेषभी रखेगा तो इसे होगा क्या? अगर दुसर्गेका प्रबलपुन्य है वह तो तरस नष्ट हो नहीं सक्ता है अगर तु हजारो प्रकारसे उसको नुकशान पहुचाना चाहे परन्तु उनके पुन्योदय जीतना तुमारा प्रयत्न है वह सब फायदाके लिये ही होगा—वास्ते अगर तु तेरा इस भवमें भला चाहता हो तो दुसरोंके गुणोंसे मच्छरता ईर्षा और द्वेषको त्याग और गुणग्राहीपणाको धारणकर ताकि वहगुण सहजमें तुझे प्राप्त होगा।

गुणवताण नराण, इसाभर तिमिर पूरिओ भणसि ।
जइ कहवि दोस लेस, ता भमसि भवे अपारमि ॥ ६ ॥

अर्थ—ससारी सब जीवों कर्मानुसार सुखदु ख भोगवते हुवे अनेक प्रकारके कारण पा के नयेनये शुभाशुभ कर्मोपार्जन करते हैं इसवास्ते शास्त्रकारोंने कहा है कि ससारी जीव न एकान्त सर्व अवगुणोंवाले हैं कीसीके अन्दर गुण ज्यादा है और अवगुण कम है और किसी के अन्दर अवगुण ज्यादा है और गुण स्वल्प है जहा पुन्य है वहा पापभी मोजुद हैं जहा पाप है वहा पुन्यभी मोजुद है जैसे सर्वार्थसिद्ध वैमानवासी देव प्राय पुन्यवान हैं बाहुल्यता पुन्यही भोगवते हैं किन्तु

ज्ञानावर्णियादि पापकर्मभी गौणतामें भोगवते हैं इसी माफीक सातवी नरकके नैरिये पापवान् बाहुल्यता पापकर्म भोगव रहे हैं परन्तु बादरपणा त्रसपणा वैक्रियशरीर इत्यादि गौणतामें पुन्यको भी भोगवना है इसवास्ते संसारनिवासी जीवोंमें बहुत गुण हो वहां किंचित् अवगुणभी होते है और बहुत अवगुण हो वहां किंचित् गुणभी होते है हे भद्र! अगर कोइ गुणीजनके अन्दर तु इर्षाभावके अन्धकारमें गीराहुवा किंचित्भी अवगुणको ग्रहन करेंगे उस अवगुणादि अपवाद निंदाद्वेष करेंगे और दुष्टभावोंसे उस अवगुणपर गुणीजनोंका तिरस्कार करेगा तो इस अपार संसारके अन्दर परिभ्रमन करतेकाही रहस्ताको प्राप्तकर महान् दुःखी होगा जैसे एक सुनन्द नामका आचार्य था उन्होंके अन्दर ज्ञान ध्यान तपश्चर्यादि अनेक गुण होनेपर एक क्रोधका अवगुणभी था उस आचार्यश्रीके उपासक एक शिष्य था वह आचार्यके पास पढता था क्रमश अच्छा विद्वान होगया फीर कारण पाके उस आचार्यके क्रोधको ग्रहन कर इर्षाके मारे लोगोंको कैहने लगा कि यह आचार्य बडाही क्रोधी है यह सुन आचार्यको अधिक अग्नि पदा हुइ और कहने लगाकि मने इस शिष्यको ज्ञान दे के एक सर्पको दुध पीलाया है एवं आचार्य और शिष्यके आपसमें द्वेषभाव बडता गया शिष्य कृतघ्नी हो आचार्यश्रीका एक दुर्गुण देखनेसे हजारो दुसरे दुर्गुण अपने आमन्त्रण कर एकत्र कर लिये और अपने दृष्टिरागी अन्ध भक्तोंकोभी उन दुर्गुणोंकी प्रसादि दे के अवगुणोपासक बना दीये और आचार्यश्रीकी आत्माको भी मलीन बनादि जीतने जीव दोनो पक्षमें बन्ध थे उन सबने अपने

आत्माका कल्याणको भुल दुर्गति जानेका प्रबल प्रयत्नकर भविष्यमें इन दुखों का चीरकाल अनुभवकीया इसवास्ते हे भव्यजीवो ! अगर अपना भला चाहते हो तो कीसीके गुणोपर ईर्षा द्वेष मच्छरता न करके गुणोंकोंही ग्रहन करो अगर दुसरोमें किसी प्रकारका किंचित अवगुणभी होगा तो उनोंकि आत्माको नुकशानि है अपनेको क्या नुकशान है एसा समजके अपनेकोंतो किसिके अन्दर किंचित्‌भी गुण हो उसेही ग्रहन करनेकि बुद्धि रखना चाहिये ।

जन्भसेई जीवो, गुण च दोस च इत्थ जम्ममि ।
त परलोए पावइ॰ अम्भासेण पुणो तेण ॥ ८ ॥

अर्थ—हे मनुष्यों ! जीव जीस वातोंका अभ्यास करता है वह ही वातें भवान्तरमे पेदा करता है अर्थात् वह वातें सुगमतासे प्राप्त होती है जेसे चित्रकारका अभ्यास करनेस जीवको चित्रकला प्राप्त होती है एसे जीस जीस कलाओका अभ्यास करता है वह वह कलाओ प्राप्त हो जाती है इसी माफीक पूर्वभवोंमें जीस जीस वातोका अधिक नजदीक अभ्यास कीया है वह वह वाते इस भवमें मील जाती है उसी वाते पर ज्यादा अनुराग होता है एक साहुकारक च्यार पुत्र थे परन्तु उनोंकि रूची च्यारोकी अलग अलग थी यह पूर्वभवोंके अभ्यासका ही कारण हैं एक उच्च कुलमें जन्मा हुवा मनुष्य निच कार्यको पसद करता है एक निच कुलमें जन्मा हुवा मनुष्य उच्च कार्यको पसद करता हैं यह सब पूर्व भवोंके अभ्यासकाही फल हैं इसी माफीक इस भवमें जीव जीस वातोंका अभ्यास करता है वहही भवान्तरमें

मीलता है अगर इस भवमें दुसराकि निंदा इस करेगा उसे भवान्तर-में भी वहही बातोंसे अधिक राग होगा तथा इस भवमें परगुणग्रहन करेगा उसे भवान्तरमें भी परगुणोंपर राग होगा इस वास्त हरक भाइयोंको इस भवमें अच्छा हितकारी अभ्यास करना चाहिय कि परभवमें भी वह हितकारी अभ्यास बना रहे जीनोंसे परम्परा मोक्षकि प्राप्ती हो इस वास्ते सत्सग करो परगुणोंको ग्रहन करो दान दो तपस्या करो प्रभुपूजा करो स्वाधर्मी भाइयोंसे वात्सल्यता रखो हरक दीन दुःखीको देख अनुकम्पा लावो इत्यादि अच्छे कार्योका अभ्यास करो ताक भविष्यमें भी तुमकों वह ही कार्यो कि सुख पूर्वक प्राप्ती हो ।

जो जपइ पर दोसे, गुण सय भरिओ वि मच्छर भरेण ।
सो विउसाणम सारो, पलाल पुजव्व पडिभाइ ॥ ६ ॥

अथ—जो मनुष्य बहुत परिश्रम करके आप सेंकडो गुणों कि प्राप्ती करी है अथात् एक मनुष्यमें सेंकडो उत्तम गुण भरा है परन्तु दुसर के गुणोंको ग्रहन न करके मच्छरता–ईर्षाको धारणकर दुसरोंका दोषकों ग्रहन करता हो वह अनक गुण सयुक्त भी विद्वानो कि सभामें शोभा नही पाता है कारण दुसरोंका दोषग्रहन करनेसे अपने हजारों गुणोंका नाश होता है जेसे हजारमण रूइ के अन्दर अग्निका एक तृणगीयाको रख देनेसे वह हजारमणरूइकों बालके भस्म कर देता है इसी माफीक गुणीजनकों दुसरोंका दोषग्रहन के सामने नही देखना चाहिये जैसे मथुरानगरीमें एक लक्ष्मीपति सेठ रहताथा वह अपनि वस परम्परास दुनियोंमे अपनि यश कीर्ति चोतर्फ फेला रखीथी

श्रौर भी दया दान क्षमा सत्यतादि अनेक गुणोंका उपासक था उस सेठकी दुकानके पास एक पान वेचनेवाला तबोली रहताथा उसके अन्दर व्यभीचारीपणाका वडाभारी दुर्गुण था यह सेठजी के देखनेमें आया शास्त्रकारोका फरमान है कि हरेक भली बुरी वातें को जानना यह ज्ञानावर्णिय कर्म का क्षयोशम है अगर दूसरा मनुष्य हितशिक्षा मानता हो तो उसे शिक्षा देना यह सज्जनता है अगर दुसरेकों हलका पाडनेको उनका दोषको प्रकाशित करना यह निच मनुष्योंका कर्त्तव्य है " सेठजीने उन तावोलीये दुर्गुण कों जान व कीसी कीसी आदमियों क आगे प्रकाशित कीया वह वात तावोलीने सुनि. तब तावोलीने सेठजी की निंदा करना सरू कीया सेठजी अपनि निंदा सहन न कर सके तब क्रोधको आमन्त्रण कीया तावोलीको दो च्यार गाली दी इतनेमे तों मान आया सेठजी आप वडा होनेका दावा अभिमान करत हुवे तावली के छीद्र देखने लगे इतनेंमें तो मायान आ के सेठजी के हृदयमें निवास कीया इससे सेठजी जाल गुथना सरू कीया तो उसी वख्त तीनो क सीरदार लोभ आया सेठजीने विचार कीया की किसी उपायसे तावोली की दुकान खरीद कर इसे यहासे निकाल देना ठीक है तावोली भी सेठजीसे सामना कीया दोनोंमें सदैव तकरार चलनी सरू हुइ जीनसे सेठजी अपना धन्धा रूजगार वाणिज्य वैपार श्रोर अपनि इज्जत तक को भी भुल गये सेठजी क कुटुम्ववाले तथा सज्जन सवन्धी कहने लगे कि सेठजी ! आप कीस इज्जत के आदमि हो श्रोर यह तावली कुजडा कीस इज्जतका हैं क्या आप ईससे लडते ठीक दीखते हो ! परन्तु सेठजी

क पीच्छाडी तो चढाज चोकडी लगी हुइ थी वह सत्य मार्ग दरसने भी क्यों दवे आखीर सठजीने बडी मुशिबतोंस हजारो गुणोकों धीर कालमे पैदा कीयाथा वह एक तानोली क दुगुण प्रकाशित करनेमें स्वल्प समयमें सब क सब गुण गमा के दुगुणीजन बेठे जो कोइ अच्छा मनुष्य सेठजी को हित शिक्षा दे उनो के साथ ही क्रोध मान माया लोभ इर्षा द्वेष करने को तैयार हो जावे आखीर दुनियो काले नागस डर उनस भी सेठजीसे अधिक डरन लग गइ सेठजी अन्तमें काल कर एक सर्प योनि क अन्दर निवास कीया ह भव्यात्मावों ! देखिये लक्ष्मीपति सेठ क अन्दर हजारो गुण होने पर भी एक तानोली क दुगुण को ग्रहन–प्रकाशित करनसे अपने प्राप्त किये हुवे हजारो गुण सहजहीमें खो क और भी सप योनिको प्राप्त करी है इस वास्ते आप कीसी प्राणीका दुर्गुण को मत दखो जीस्क दुर्गुण होगा उसको नुकशान है आप तो अपने कों गुण दीसना हो तो उस ग्रहन करलो इसमें ही आपका भला है।

जो परदोसे गिण्हइ, सतासत वि दुठ्ठ भावेण ।
सो अप्पाण वधइ, पावेण निरत्थ एण वि ॥ १० ॥

अर्थ––जो कोइ मनुष्य प्रकृति के आधिन हो दुसरों क गुणो कों तो ग्रहन नही करते है किन्तु दुसरों क छता या अछता दोषोंको ग्रहन कर अपनि आत्मा को पापकर्म रूपी पासमें बन्ध कर निरथक ससार रूपी महान् समुद्रम डाल रहे है उन जीवों को यह सोचना चाहिये कि कासी दुसरा क अन्दर दुगुण है भी सही तों

उनो के लिये भी शास्त्रकार मना करता है कि दुसरो के अवगुण तुम को किंचित भी नुस्खान नही करता है तो फीर तु दुसरों के अवगुण खरीद कर अपनि आत्माको क्यो भारी करता है जैसे एक वैपारी कि दुकानपर विदशी कापड बहुत भरा हुवा है जिस्को कोइ भी खरीद नही करता है बल्के जहा तहा उसका तिरस्कार ही होता है दुसरा खादी के कपड के हजारो ग्राहक आते है परन्तु उन वैपारीकी दुकानमें वह खादी नही है तो अब वह वैपारी कौन कपडे की खरीदी करेगा क्या विदेशी कपडेकी या खादी के कपडकि अगर समजदार वैपारी होगा तो जीस मालकि ज्यादा बिक्री है वह माल अपनि दुकानमें नही है उसकी ही खरीदी करगा, तब ही वह लाभ उठा सकेगा इसी माफीक दुर्गुणरूपी विदेशी कपड तो पहलेमें ही तुमारी आत्मारूपी दुकानमें बहुतसा भरा हुवा है जीसको कोइ भी सज्जन खरीद नही करता है और शुद्ध खादी के कपड रूपी गुण तेरी आत्मामें स्वल्प भी नही है और उनके ग्राहक बहुतसे आते है तो तुझे खरीदी भी इसी गुणोंकी करनी चाहिये ताकि भविष्यमे भला हो जब कीसी मनुष्य के अन्दर दोष है भी सही तो उनोके लिये भी यह अवगुण ग्रहन करना बिलकुल मना है तो कीसीपर बिगर दरव अछते दूषणोंका आरोप कर देना यह कीतना बडा भारी पाप है क्या दुसरोंपर असत्यारोप करदेनेसे उनोकी आत्मा दु ख न पाता होगा ? उस दु ख पानेका कटु फल भविष्यमे असत्यारोप करनवाले को भोगवना नही पडेगा ! हे भद्र ! एक पोतनपुरनगर के अन्दर बाल विध्वा रोहणी बाइ अपनि

भैंस को जगलमें गालन को जा रही थी गेहणी कुच्छ पीच्छाडीथी भैंस एक कोनम निकल के दुसर मठके घरद्वार पर गोवर कीयाथा सुन्दर शेठाणीन इस गोवरकों दख के घरके अन्दर गइ इतनम पीच्छेमे गेहणी आके उस गोवर को उठा के चलती हुइ फीर सुन्दर शेठाणीं आइ गोवर न दखनसे उस रोहनी को गाली द के कटुक वचनोंसे बोली के वस्या लपटा मर दरवा हुवा गोवर कैसे लेगइ इन अद्भुत दोष प्रकाशका यह फल हुवा कि उन सुन्दर शेठाणीने दश भव लगातार वैश्याका भव कर लख्खा को भोगव के ससारमें परिभ्रमन करना पडा इस वास्त ह भव्य जीवो ! कीसी भी मनुष्यमें छता हो वे अछता परन्तु दुसरोंका अवगुणको तो कीसी प्रकारसे प्रहन न करना चाहिये दोषका ग्रहन करनमें कीसी मनुष्यका कीसी प्रकारका स्वार्थ भी नहीं होता है तो विगर स्वार्थ कमवान्धके भवांतरमे दु खी होना कीसी प्रकारसे ठीक नही है वास्त प्रथम गुणग्राही बनो।

त नियमा मुत्तव्व, जत्तो उपज्जए कसायग्गी ।
त वत्थु धारिज्जा, जेणोवसमो कसायाण ॥ ११ ॥

अर्थ—हे भव्य ! जिस प्रवृति व कारण से स्वय अपनी आत्मा कों या पर आत्माओका कषाय रूपी अग्नि पैदा होती हो उस प्रवृति कों निश्चयकर शीघ्रतापूर्वक त्याग करो कारण कषाय याने क्रोध मान माया और लोभ यह ससार रूपी वृक्ष के मूल बीज है शेष पाप इन वृक्ष कि शाखा प्रतिशाखा पत्र पुष्प है नरक निगोद व घोर दु:ख इस वृक्ष व फल है जहा तक कषाय पतला नही पडा

हो वहांतक सर्व कष्टक्रिया निष्फल है कषायोत्पत्ति व कारण-शरीर औपधि क्षेत्र वस्तु-धन धान्यादि तथा कुटुम्ब परिवार जो है पहले इनो से ममत्वभाव कम करो इनोका सयोग को शनै शनै छोड़ो क्यों कारण निमित्त कारण से आत्मा शुभाशुभ प्रवृति कीया करता है चाहे एक मास तक क्रोधी मनुष्य के पास रह जाइये अगर रहनेवाले मे क्रोधी से भी शान्तगुण अधिक होगा तो वह क्रोधी कों भी शान्त बना देगा या शान्ति करने वालेसे भी क्रोधी में क्रोध गुण अधिक होगा तो वह शान्त को भी क्रोधी बना देगा इस वास्ते पहले से ही निमित्त कारण अच्छा रखना चाहिये कि उन क्रोधादि कषाय का प्रवेश तुमारी आत्मा में हो ही न सके। अगर अनादि काल से लगी हुइ प्रीति के कारण कषायादिका सजोग हो तो भी तुम को एसी वस्तुको धारण करना चाहिये कि जिनसे उदय या सत्ता कषाय का भी उपशम हो एसी वस्तु मुनियों के पास ज्ञानीयोंके पास शान्त प्रवृति-वालोंके पास मीलती है वास्ते पेस्तर उन महात्मावों कि सगत करो वह तुमको वीतराग वाणि का शान्त जल से तेरी कषाय अग्निकों शीघ्र शान्ति कर देगा जैसे एक शान्त स्वभावी गुरु महाराज क्रोधी शिष्य का सग कर गोचरी गये थे मृत्यु देडकीपर गुरु का पाव लग जाने से क्रोधी शिष्यने कहा कि गुरुजी आपने देडकी मारी है इस्का प्रायश्चित लो इत्यादि गुरुजी ने बहुत शान्ति रखने पर भी निमित्त खराब होने से गुरुजी कों गुस्सा आया पत्थर हाथमे लेके शिष्यको मारने कों जाता था उसी पत्थर कि चोटसे आप मृत्यु पाके चंडकोपीया सर्प हुवा क्रोधके वस हो साधु धर्म खो के

मय हुवा मय क भवमे शान्त गुणाधारक भगवान वीर प्रभुका मरणा लेन मे आठम स्वग म निवास कीया इस वास्त कषायोत्पत्ति क कारण क्रोडय कषाय शान्ति क कारणो को धारण करे । शान्त गुण वालो कि सगत करो तात शान्त गुणो कि प्राप्ती हो ।

जइ इच्छह गुरयत्त, तिहुयण मज्झमि अप्पणो नियमा ।
ता सव्व पयत्तेण, परदोस विवज्जण कुणह ॥ १२ ॥

अर्थ—इस ससार क अन्दर सामान्य स लेकर विशेष जीव अपना अपना महत्व वढान कि यान सब दुनियोम बड होन कि इच्छा रग्वत है अथात छोट छोट मनुष्य भी वडा होन की कोशीस कीया करत है परन्तु दुनियो म बड होन क कारण क्या है उस प्राप्त करन कि कोशीष स्यात् ही कोइ मनुष्य करत होगें कीतनक भाइ धन एकत्र कर दुनियोम वडा होना चाहात है कीतनक दुसरो का अपमान तिरस्कार कर आप वडा बनना चाहात है कितनक क्रोधकर शान्त मनुष्यों को दवा दनमें ही अपना वड़ाइ मान वठने है कितनक राजस झगड जगड क कीतनक वड वड मकान बन्धा क कीतनक मालमग्मे पाच सात हजार रूपीये खरच कर कीतनक धम क नामस और कीतनक अपना पक्ष वडा क दुनिया म वड होन चाहत है परन्तु यह सब कैसा है कि जैस विषमिश्रित पक्वान्नादि स्वरप काल क लिये मान भी लिया जाय क बहुत स लोग उन वडा मान भी लिया परन्तु आखीरम वह वडापणा कहातक? जवतक पूर्व भवक पुन्य है वहातक । फीर तो पुन्य नाशका कारण

मीलनमें खजाना खुट जावेंगे तब राजा गवगा कि माफीक अपनि गुरुता छोडना ही पडे गा आचार्य श्री फरमाते है कि हे सुखाभिलापी भव्य ! अगर तुमको सचा दीलसे गुरुता धारण करनी हो तो अव्वल तु यह प्रयत्न कर कि दुसरों का दोषों को मन करके भी नहीं देखना अर्थात दुसरो कि निंदा नही करना दुसरो के साथ ईर्षा मच्छरता नही रखना जब तक अन्दर यह पवित्र गुण आ जायगा तब दुनियोमे निचसे निच कर्त्तव्य जो परदोष ग्रहन का था वह छुट जायगा यह निच कर्त्तव्य छुट जाने स परगुण ग्रहन करने का जो उचा स उचा गुण है वह तुझे सहजही मील जायगा कारण ससारी जीवों की यह प्रकृति तो स्वभावसे ही है कि कीसी न कीसी प्रकारस दुसरों का स्वभाव को ग्रहन करना अगर परदोषण ग्रहन करेगा तो परगुण ग्रहन न होगा और परगुण ग्रहन करन का स्वभाव पड जायगा तो परदोषण के सामने तब भी नही देखेगा इस्क स्थान में एक ही वस्तु ठर सकेगी चाहे गुण चाहे अवगुण इस वास्ते तु परदोषण ग्रहनरूप निचवृति का शीघ्र त्याग कर जिनसे सबै ससार कि पद्वियासे तुझे उच पद्वि मीलेगा आखीर मोक्षनगर का राज तक भी मील जायगा जितने जीव ससारमें बड कहलाते है वह सब परदोषणो का त्याग कर के ही हुवे है ।

चउहा पससणिज्जा, पुरिसा सव्वुत्तमुत्तमा लोए ।
उत्तम उत्तम उत्तम, मज्झिम भावय सव्वेसिं ॥ १३ ॥

अर्थ—परदोषण त्याग और परगुण ग्रहन करने स अनक

गुण प्राप्त होते हैं वह गुणी जन इस जगतके अन्दर पवित्र गीने जाते हैं प्रशंसा करने योग्य होते हैं इस वास्ते प्रशंसनिय पुरुषों कि उत्तमता बतलाने को आचार्य श्री फरमाते हैं कि हे महानुभाव ! इस संसारके अन्दर च्यार प्रकार के पुरुष जो (१) सर्वोत्तमोत्तम (२) उत्तमोत्तम (३) उत्तम (४) मध्यम यह च्यार प्रकार के पुरुष अपने उत्तम गुणों से दुनियों में प्रशंसनीय है ।

जे अहम अहम अहमा, गुरु कम्मा धम्म वज्जिया पुरिसा ।
ते विण न निंदणिज्जा, किंतु दया तेसु कायव्वा ॥१४॥

अर्थ—पापके अधम और छटा अधमाधम जो गुरु कर्मी तथा धर्म वर्जित याने धर्मरहित क्रूरकर्मी अनेक प्रकारके अधम करनेवाले पापिष्ठोंको देख उन अधर्मी पुरुषोंकि भी निन्दा नहीं करनी चाहिये किन्तु उन अधर्मी जीवोंको देख उनोंपर दया भाव लाना उत्तम पुरुषोंका कर्तव्य है अगर अपने अन्दर इतनी योग्यता हो कि मधुर वचनोद्वारा हितशिक्षा दे उनोंसे वह अधर्मी वृत्ति छोडा देवे अगर कहनेपर भी वह अपनि पापवृत्तिको न छोडे तो यह समजना कि यह विचारा क्या करे इनके पूर्वभवमें एसे ही कर्मोपार्जन कीया हुवा है. कीसी प्रकारसे यह जीव रहस्तेपर आवे और अच्छे कर्म करे तो ठीक है साथमें यह भी ख्याल रखे कि वह दुर्गुण मेरेमें न आ जावे कीतनेक अज्ञान लोग दुसरोंको अनुचित कार्य करते हुवे देख आप उनकी निन्दा करते है, अपमान करते हैं, तिरस्कार करते हैं फीर उसी कार्योंको आप स्वयं सेवन करते हैं इसका फल यह होता है कि

आप दोपीत होने से दुसर आदमि उनोका कहना न मानके उस दुर्गुणक कार्य करन मे और भी मजबुत वन जाते है उनका कारण निंदा करनेवाला वन जाता है और निंदा करनेवालेमे वह ही दुर्गुण भविष्यमें प्राप्त हो जाता है इसवास्त चाहे ऐसा भी अधर्मी क्यो न हो परन्तु उसकी भी निंदा तो कीसी हालतमे न करना चाहिये उस पर तो दया भाव ही रखना चाहिये

पच्चगुब्भड जुव्वण, वतीण सुर हि सार देहाण ।
जुवईण मज्भगओ, सव्वुत्तम रुववतीण ॥ १५ ॥

अर्थ—सर्वोत्तमोत्तम पुरुषोंक लक्षण वतलात है कि वह कैसे ब्रह्मचर्यको धारण कर अपन मनकि मजबुती रखत है कि जो तारूण्य युवा स्त्रियों जीनोंक सर्व अगमे विकारक चिन्ह प्रगट हुवा हो जोवन परिपक्व और शरीरका सुन्दराकार से अप्सरावोंको भी लज्जित करनेवाली हो, रूपलावण्य कर सुरसुन्दरीयोंका भी पराजय कर दीया हो, वदनविलास मनोहर नयन काम कदलीगृह इत्यादि मोहननेलि रूप स्त्रियोंके अन्दर निवास करत हुवे भी अपना ब्रह्मचर्यरूप चिंतामणि रत्नका यत्न कीस रीती से करते है वह आगेकि गाथामे वतलाते है

आ जम्म वभयारी, मणवयकाएहि जो धरइ सील ।
सव्वुत्तमुत्तम पण, सो पुरिसो सव्व नमणिज्जो ॥ १६ ॥

अर्थ—जो पुरुष मनुष्यावतार धारण कर जन्मसे ब्रह्मचारी है वह पहले वतलाइ हुइ तारूण्य ओरतोंक विच रहा हुवा मन वचन कायासे ब्रह्मचर्यव्रत पालन करता है अर्थात् उन ब्रह्मचारी पुरुषोंक

आग कामदव भी लज्जित हो अपने शस्त्रको वापिस खेंच लेते हैं ऐसे महान् पुरुषोंको सत्पुरुषोत्तम पुरुष कहा जा सक्ते हैं, वह त्रिजगमें परम पूजनीय होते हैं जैसे विजयकुवर विजयाकुवरीने आ जन्मान्त तक एक शय्यामें निवास करते हुवे भी अखंडित ब्रह्मचर्य व्रतको पालन कर अपने अगणित पुन्योंसे कीर्तिस्थंभ दुनियोंमें रोप गये हैं, जिनोंका नाम लेनेसे ही भव्यात्माओंका कल्याण होते हैं ब्रह्मचर्य पालन करनेवालोंको कल्याणका रास्ता हो इसमें क्या आश्चर्य है किन्तु उन महान् पुरुषोंके दर्शन करनेवालोंके हजारो रोग नष्ट हो जाते हैं जैसे कि इस भारतभूमिके भूषणरूप नन्दपुर नामका नगरमें आदर्श पुण्यवन्तु नामका सेठ था उनके यशोमति नामकि सुशीला भार्या थी वह दोनों श्रावकधर्म प्रतिपालन करना सदा मनोषी थे उन उत्तम दम्पति से एक पुत्र रत्न पैदा हुवा जिनका नाम कुलचन्द्र रखा था पूर्वाभ्यास से वह बालब्रह्मचारी अवस्थामें करीबन पचवीस वर्ष तक मन वचन कायासे ब्रह्मव्रतको पालन कीया जिनसे उनका पवित्र शरीरकी कान्ती देवतावो भी सहन नहीं कर सक्ते थे उनके शरीरका स्पर्श भी दुनियोंके रोग नष्ट करनेके लिये एक परम औषधि हो रही थी यह बात नगरमें जाहर होनेसे एकदम सेंकडो बैमार कुलचन्द्रके चरणोंका स्पर्श कर निरोग होने लगा इसपर कुलचन्द्रने सोचा कि यह रूजगार मेरे ब्रह्मव्रतके लिये ठीक नही है क्योंकि " अतिपरिचयाऽवज्ञा " होनेसे कभी न कभी नुकशान ही है इस विचार से अपने मकानको बन्ध कर अन्दर बेठ गया, दुसरे दिन सेंकडो बैमार आये कुवरजीका दर्शन स्पर्शन न होनेसे वह लोग निराश होने लगे इतनेमें

सेठजीने अपने पुत्र रत्नसे कहा कि हे कुलचन्द्र यह उपकारका काम तुमे अवश्य ही करना चाहिये इत्यादि जब कुवरन अपन मकानकि एक बारी खोल दा बैमारको दर्शन दिये वह बैमार लोग उन बाल ब्रह्मचारी महा पवित्र पुरुषका दर्शन करते ही अपन दुष्ट रोगको नष्ट कर अपने अपन स्थान चले गये, रत्न चीरकाल तक दुनियोंका उद्धार कर अन्तमें दीक्षाव्रत ग्रहन कर सहजमें अष्टकर्मोंका क्षय कर अक्षय सुखोंमें विराजमान हो गये सर्व व्रतोमे ब्रह्मचर्यव्रत श्रेष्ठ है ब्रह्मचर्य व्रतसे रोग, शोक, दुःख, दारिद्र, जन्म मरणादि अनेक दुःखोका अन्त होता है जो पुरुष जन्मान्त इस व्रतकी आराधना करते है वह निश्चय प्रशमनीय हो अन्तमें सिद्ध स्वरूप धारण कर सुखी होता है।

एव निह जुवइ गओ, जो रागीहुज्ज कहवि इग समय।
बीय समयमि निंदइ, त पाव सव्व भावेण ॥ १७ ॥
जम्ममि तम्मि न पुणो, हविज्ज रागो मणमि जस्स कपा।
सो होइ उत्तमुत्तम, रूवो पुरिसो महासत्तो ॥ १८ ॥

अर्थ—दुसरा उत्तमोत्तम पुरुषोंके गुण बतलाते है शास्त्रकारोने पहलेसे ही फरमाया है कि ब्रह्मचारी पुरुषोंको महीला परिचय तो बिलकुल करना ही नहीं चाहिये कारण स्त्रीयोंके रोमरोममें काम रूपी विष भरा हुवा है जीनोंको देखते ही रागभावका चित्र खडा हो जाता है आचार्यश्री फरमाते हैं कि कदाच युवा, तारूण्य, रूप, जोबन, लावण्य, रूपवान्त और विकारवाली सुन्दरीयोंको देख ब्रह्मचारी पुरुष एक क्षणमात्र उन महीलाओं कि तर्फ रागचित्तवाला हो

भी जाव परन्तु दुसरी वाग्याम उन अनन ससार भ्रमन करानेवाले अब्रह्मचार्यरूपी दुर्गुणसे पीच्छा हट उसकी तिन्न थाने आलोचना कर कि हे जीव ! इस किंपाकफलरूपी मैथुनादि विषय सेवन कर-नेसे तु अनंत काल तक ससारमें परिभ्रमण पर नरक निगोदक असह्य दु खोका सेवन कीया है यह क्षणमात्र सुखोंके लिये जो हजारों मुशिबतोंस प्राप्त किया हुवा ब्रह्मचर्यरूप अमूल्य सुख रत्ना-नार्को खोनेको तैयार हो गया इत्यादि शुभ विचारोंसे अपने निजान-न्दको समजाय उन क्षणमात्रके भग्न परिणामो कि आलोचना निंदना गहन कर फीर ताम उम्मर--जन्मभरमे उस विकारवाली ओरतों कि तर्फ राग न करनवालोंको भी शास्त्रकारन उत्तमोत्तम पुरुष माना है वह महामत्तावाला वीर पुरुष कहलात हुए फीर जन्मभर एमा दुष्टराग कभी भी नही लाने यह दुसरा पुरुष भी जगतके जीवोंको वन्दन पूजन करन योग प्रशमनिय--महासत्ववाले होते है जैसे पूर्णानन्द नामका श्रेष्टि पुत्र बाल्यावस्थाम ब्रह्मचय व्रत धारक युवक वयमें श्री शुभद्-त्ताचार्यके पास दीक्षा ग्रहन कर एकादशागाध्ययन कर जगलमे प्रतिमा धारण कर तपश्चर्या करने लगा वहापर एक कामातुर चन्द्रका-न्ता नाम कि विद्याधरणी आके उन मुनिसे कामप्रार्थना करती हुइ अनेक हावभाव पूर्वक मन्लिा चरित्र दरसानेका प्रयत्न कीया परन्तु ब्रह्मव्रतक आगे विचारा कामन्दका सत्व कहा तक टीक सके ? फीर विद्याके प्रयोगसे उन चन्द्रकान्ताने बहुतसे विलापस अपनि काम चेष्टा दीखाइ उन समय पूर्णानन्द मुनिके मनके अन्दर महीला कि तर्फ किंचित् राग होते ही मुनिने सोचा कि अहो आश्चर्य कर्मगति विचित्र है मै मेरे

म्वद्रव्य भोक्ता होनेपर भी मरा दुष्ट मन परद्रव्य कि तर्फ आकर्षित होता है धिक धिक इस कुटिल मनको एसा विचारसे अपने क्षणभरके पापको दुसरी क्षण पश्चात्तापमें सफल कर ताम उम्मर तक स्वात्म गुणोंमे रमणता कर अक्षय स्थानको प्राप्त कर लिया एसें महासत्तावालेको शास्त्रकारोंने दुसरा उत्तमोत्तम पुरुष माना है यह भी जगतमें प्रशसनिय है ।

पिच्छइ जुवइ रुव, मणसा चिंतेइ अहवा खणमेग ।
जो न यरइ अकज्ज, पत्थिज्जतो वि इत्थीहिं । १९ ॥

अर्थ—रूपवन्ती विकारवाली सुन्दर मधुर वचनोसे काम पीडित करनेवाली महीलाओंका परिचय रूपी मोहजालमें फसे हुवे ब्रह्मचारी पुरुष क्षणभरके लिये उन कामी औरतों की तरफ रागी बन भी जावे वह कामी औरतो प्रार्थना कर ब्रह्मचारी पुरुषोंको क्षण मात्र अपनि तर्फ चित्तको आकर्षित कर भी ले तथापि वह ब्रह्मचारी अकार्य (मैथुन) के अन्दर प्रवृत्ति न करके अनन्त ममार वृद्धिका हेतु ' मैथुन ' को समज अपने दुष्ट मन रूपी अश्वकों ज्ञान चाबुक द्वारा पीच्छा हटा ले फीर जन्मभरमें एसें निमत्त कारणवाली औरतोका परिचय न करे वह ब्रह्मचारी भी जगतमें पूजनिय और प्रशस्याका पात्र है जैसे एक सागरपुर नगरमें धन्ना नामका शेठ रहता था वह निशावरमें सवाक्रोड मुद्रका कि किमतका रत्न लाया था वह अपने मकान कि एक गुप्त कोटडीके अन्दर तीजोरीमें रखा था यह बात किसी तस्करोंको मालुम हुइ परन्तु

शेठजीने अपनी तीजोरीके पक्का ताला लगाके गुप्त कोटडीके भी ताला लगा दीया था जब कीसी अन्य स्थान जाते थे उस समय मकानके भी पक्का ताला लगा देते थे एव तीन तालोंके अन्दर जाके तासे रक्खा हुवा रत्नकी शेठजीकों बिलकुल चिंता नहीं थी बल्के यद् रछाीमें स्वेच्छया घुमा करते थे एक रोज गरमीके दिनोंमे शेठजी नगरके बाहार बगीचेमें गये थे पीच्छेसे चोरोंने शेठजीके मकानका ताला तोड अन्दर प्रवेश कीया कीसी सज्जनोंने यह बरतान्त शेठजीको कहा शेठजीको तो तीन तालोंका घमंड था वह गरमीके दीनोंमे उस शीतल वाडीको छोड भी क्या ? चोरोंने तो गुप्त कोटडीका भी ताला चोरोंने तोड लीया परन्तु प्रमादि शेठ सावचेत न होनेसे चोरोने ती जोरीका ताला तोड रत्न ले गया शेठजी निर्धन हो अनेक कष्ट सहन करते हुवे महान् दुःखी हुवे इसी माफीक ब्रह्मचारी पुरुषोंके ब्रह्मव्रतरूपी अमूल्य रत्न है जिसके मन (मकान) वचन (गुप्त कोटडी) काया (तीजोरी) एव मन वचन काया रूप तीन ताला लगा रक्खा है अगर मनका ताला तुट जानेपर जो सावचेती आता हो तो रत्नका रक्षण कर सक्ते है यहा पर यह दृष्टान्त लागु पडता है कि मनरूपी हस्ती कदाच उन्मार्ग चला भी जाय तो भी ज्ञानरूपी अंकुशसे उनको सन्मार्ग ला सक्ते है जेसे शेठजीके मकानका ताला तुट जानेपर भी दो तालोंसे रत्नका यत्न कर सक्ते थे मनका पाप मनसे उत्तर भी सक्ते है परन्तु प्रमादि शेठजीकी माफीक वचन और कायाके ताले भी चोरोंसे तुटा दे तो फीर रत्नका रक्षण होना असंभव है इस वास्ते प्रथम तो एसे अपवित्र स्त्रीयोंका परिचय करना ही दुःख समुद्रमे डुबना है कदाच कीसी मोह पवन चलनेसे चचल मन क्षणमात्र

चलायमान् हो भी जावे तो उसे शीघ्र अपने स्थानपर ले आनवाले महान् पुरुष प्रशसनिय ही समजना चाहिये.

साहूवा सड्ढोवा सदार संतोस सायरो हुज्जा ।
सो उत्तम मणुस्सो, नायव्वो थोव संसारो ॥ २० ॥

अर्थ—साधु भगवन्त सदेव नौवाड संयुक्त ब्रह्मचर्य व्रत नौ कोटी विशुद्ध पालन करते है याने १ जहापर स्त्रि नपुंसक और पशु हो वहा पर न रहे २ स्त्रियोकि शृंगार रसवाली कथाए न करे ३ स्त्रियों जिस आसन या भूमिपर बेठी हो वहा कममेकम दो घडी तक न बेठ ४ स्त्रियोके कामी अंगोपांगादि अवयवोको विषयदृष्टिसे न देखे ५ भीत टाटी कीनातके अन्तरमे रही हुइ औरतोंका विषय शब्द हास्य-विनोद-कामक्रीडाके शब्द न सुने ६ पूर्व गृहस्थावस्थामे पांचेन्द्रियके विषयसुख भोगवीया हो उस याद न करे ७ नित्यप्रति सरस आहार जो मदनदीपक हो वह न करे ८ निरसाहारभी प्रमाणासे अधिक न करे ९ शरीरका मर्दन स्नान कर शुश्रुषा न करे एवं नौ वाड सहित ब्रह्मचर्य व्रत पाले । और श्रावक भी सदा स्वदारा संतोष याने अपने विवाह कीया हुवा सेही संतोष रखे, परदारा वेश्या विधवा आदिका त्याग रूप ब्रह्मव्रतको पाले अर्थात इन साधु श्रावकोको भी शास्त्रकारोने उत्तम पुरुष माना है कारण एसे श्रावकादि भी सुदर्शनशेठकि माफीक स्वल्प संसारी होते है

पुरिसत्थेसु पवट्टइ, जो पुरिसो धम्म अत्थ पमुहेसु ।
अनुन्नामबाहाइ, मज्झिम रुवो हवइ एसो ॥ २१ ॥

अर्थ—जो मनुष्य संसार अन्दर रहा हुआ भी धर्म अर्थ और काम तीनों वर्गको साधन करता हुवा आपस पास एक दुसरेको बाधा न करते हुवे अर्थात् धर्मके समयमें धर्म अर्थ-द्रव्योपार्जनके समय अर्थ और पूर्व संचित कर्म निर्जरा या मनके विकल्प दूर करनेके इस गम तथा सन्तति के लिये अपने विकारी परिणामको शान्त करनेके लिये काम इन तीनो वर्गको सेवन करता भी हय ज्ञेय उपादेयको बराबर समझता हुवा भी सदाचारमें प्रवृति करनेवालोंको मध्यम पुरुष कहा जाते है जैसे आनन्द, कामदेव, संख, पोक्खलजी आदि गृहस्थधर्म पालन करते त्रीवर्ग सेवन करते हुवे भी धर्मवर्गको ही उपादेय समझते थे श्रावकोंके लिये जघन्य मध्यम और उत्कृष्ट ग्रहस्ता बतलाया हुवा है जैसे एक दर्शन श्रावक होते है वह जघन्य दुसरे व्रतधारी होते है वह मध्यम तीसरे प्रतिमा प्रतिपन्न श्रावक उत्कृष्ट दर्जे माने गये है इस वास्ते श्रावकोंको उत्तम पुरुषकी तथा मध्यम पुरुष कि गीणती में गीना है वह व्रतोंकी अपेक्षा है वस्तु श्रद्धा तत्त्व रमणता कि अपेक्षा तो श्रावक भी उत्तम पुरुषों कि ही गनतीमें है ।

एएसिं पुरिसाणं, जइ गुणगहणं करेसि बहुमाणं ।
तो आसन्न सिवसुहो, होसि तुम नत्थि संदेहो ॥ २७ ॥

अर्थ—यह जो च्यार प्रकारके उत्तम पुरुष बतलाये है इन महानुभावोंका अगर तु अन्तःकरणसे गुणग्रहन करेगा और इन महापुरुषोंका आदर सत्कार गुणकीर्त्ति के साथ बहुमान करेगा तो संदेह रहित शिवसुख नजदीक होगा । कारण दुसरोंके गुणोके ग्रहन करना

है सो एक कीस्मका दुसरोंके गुण अपने अन्दर प्रवश करना है जेसे कीसी मनुष्यमें सत्य बोलनका गुण है तो आपको सत्य प्रीय लगेगा तब उस सत्यका अनुमोदन होगा जो वस्तु प्रीय लगती है वह कीसी न कीसी समय ग्रहन हुवा ही करती है उसी वस्तुका पक्षपातिभी बनना पड़ता है जब सत्य प्रीय है तो सत्यका पक्षपाति हो उस सत्यको ग्रहन करनेका समयभी आ जावगा इसी माफीक गुणी जनोंका गुण करनेमें गुणीयों को तो हानि लाभ नही है किन्तु अपनि आत्माको तो बडा भारी लाभका कारण हो जाता है जैसे स्थानायांगजी सूत्रके चतुर्थ स्थानमें कहा है कि गुणीजनोंका गुण करनेसे दूर रहा हुवा कैवल्यज्ञान नजदीक हो जाता है इस वास्ते चैतन्यका कल्याणके रहस्योंमें गुणग्राहीपणा प्रथम मंगलाचरण है अगर इस भवमें और परभवमें सुखी होनेकि किंचित् भी अभिलाषा रखते हो उन महानुभावों को प्रथम परगुण ग्रहन करनेका पाठही पढना चाहिये ।

पासत्थाइसु अहुणा, सयमसिढिलेसु मुक्कजोगेसु ।
नो गरिहा कायव्वा, नेव पससा सहामज्झे ॥ २३ ॥

अर्थ—पंचम दुष्मकालमें शरीरादि मंद संहननके कारण ले के संयमतपसे शीथील पड हुवे पार्श्वस्था उसोन्ना कुशीलीये ससक्ते मोहपीडित लोलुपताके वशीभूत हुवे वेषधारीयोंको देखके उनोकिभी निन्दा न करना अवज्ञा—अपमानादि न करना चाहिये और उन लिंगधारी मंडल कि प्रशंसा भी न करना चाहिये कारण जगतके सर्व जीव कर्माधिन है अगर शासनको कलंकित करनेवाला हो तो उस हितशिक्षा है

मधुर वचनोंसे समजाना उत्तम पुरुषोंका कर्त्तव्य है किन्तु उनोंकि निंदा कर उलट गहस्त न लगा देना चाहिये कि जीनासे भविष्यमें शासनके निष्पन्न नुकशान उठाना पडे वह अपमानित निर्भीकता से अनेक दुराचार वगैरे उसके मूल कारण निंदा करनेवाला होगा भविष्यमें उस्के बुरा फल उसही भोगनेवाला पडेगा अगर स्वगत आत्माका फल निष्पन्न पात इच्छित दुनियाको बनाना चाहे तो खुशीसे बना सक्ते है जब निंदा भी न करणी तो इन लिंगधारीयोंकी प्रशसा भी न करना चाहीये कारण इन पाश्वस्थोंकी प्रशसा करनेसे उनोंके शिथीलाचारकों और भी मन्द मीलेगी जीनसे वह अधिक दुराचारी हो शासनको आघात नुकशान पहुचावेगा जिस्का भी निमित्त कारण वही प्रशसा करनेवाला होगा एसे दुधारके समय उत्तम जनोंको मध्यस्थ वृत्ति रखके अपनि आत्माका कल्याणही करना ठीक है जगतमे यदुतसा मेल भरा हुवा है हे भव्य ! तु धीमे धीमसे मेलको धारेगा तु तेरी आत्माका ही मेल धोके उज्वल बना ले तो तेरे लिये सब जगत उज्वल ही है !

> काउंगा तेसु धरणा, जइ मन्नइ तो पयासए मग्गं ।
> अह रसइ तो नियमा, न तेसि दोस पयासइ ॥ २४ ॥

अर्थ—ग्रन्थकर्त्ता और भी उपदेशकोंको हितशिक्षा देते हैं कि हे उत्तम जनों ! अगर वह पाश्वस्थादि वगैरेह उन्मार्ग जा रहा है अपनी आत्माको भान भुला हुवा तुच्छ सुखके कि अभिलाषासे महान सुखोंको गमा रहा है इसलिये उन बाल जीवपर करुणा भाव लाके अगर वह हितशिक्षाको अमृततुल्य मानता हो अपनि

भूखेको भोजन कराना हो आत्माके लिये उस उन्मार्गको छोडना हो गर कोई गरीब हो तो उनके हितके लिये अच्छी शिक्षा दो जैसे पद्म श्रेष्ठि जय नाम कुंवरको तीन बातोंका दुर्व्यसन पड गया था, एक जुवा खेलना, दूसरा वेश्याके यहा जाना, तीसरा हलवाइयोंके यहा जाके भूख दूध मीठाई ले खाना. शेठने कुँवरको बहुत मना करी, परन्तु इसकि आदत न छूटी आखीर शेठका अन्तिम समय आ पहुचा, पुत्रने कहा कि क्यो पिताजी ! आपके शीलसे बुद्धि हो तो कहो उस समय सब सम्बन्धी बहुत बैठे थे वैसाहि शेठजीने कहा पुत्र ! अगर तु मेरा कहना करता हो तो मैं तुझे आज अन्तिम शिक्षा देता हु कि जो जुवा खेलना हो तो बाहार न जाना अपने मोतीमहल जो कोडन रुपयों कि लागतसे बना है वहापर जुवा रमना वेश्याके वहा जाना हो तो एक शुभ सूर्योदय कि टैमसे जाना और हलवायों कि दुकानसे मीठाइ लाना हो तो मध्यान-दोपहरको लाना पुत्रने सोचा कि यह तो तीनो बाते मेरे मनमानी है ईनके मनुष्योमे मेरा पिताजी कहते है इस वास्ते इन कार्योंको करता हुवा भी मे जगतमें निर्दोषी होउगा ऐसा विचार अपने पिताजीके वचनको शिरो धारण कर लिया शेठजी गुजर गये सब लौकीक व्यवहार करनेके बाद जुवा खेलनेवालेको अपने मोतीमहलमे बुलवा लिया जुवे खेल रहे थे इतनेमें एक साहुकारने उस मोतीमहलको देखते देखते नेत्रोमे आसु छुट गये इसपर जयकुँवरने कारण पुच्छा उसने कहा कि भाइ ! मेरे पिताजी जब गुजरे थे तब मेरे भी अच्छा महल था पर मे जुवार्मे गमा दीया यह सुन

जय शेठने सोचा कि न जाने मेरी भी यह दशा न हो कुच्छ देर विचार कर उन कुँवर रमनेवालोंका बडा भारी तिरस्कार कर निकाल दीया कि मेरे जुवा नही खलना श्रोर नही मेरी मकानात रमाना। फीर शुभ वैश्याके वहा गया तो शुभ वैश्याका रंग ढंग इस कदरका बीगड़ा हुवा था कि देखते ही घृणा आने लग गइ अपने वीर्यरत्नका या अमूल्य इज्जतका ख्याल होते वैश्याका भी त्याग कर दीया बादमे मध्यान दोपहरको हलवाइके वहा माठाइ खरीदनको गया तो वहा कुत्ते फडाइयो चाट रहे है कलाकन्दके अन्दर सेंकडो मख्खीयों जमी हुइ पडी है पाणीके अन्दर कीडे कलवलाट कर रहे है बहुत दिनोंके आटेमे इलीयो चल रही है इधर माता कि दुर्गन्ध आ रही है इत्यादि व्यवस्था देखके जय कुँवरका दील हट गया कि मेरे शरीरमें जो बैमारी होती थी वह सब इस मूल मिष्टानका ही कारण है कुँवरजीके तीनों दुर्गुण जो तीरस्कार बुद्धिसे कइ वर्षो तक न छुटे थे वह हित मधुरतासे स्वयं ही छुट कर गये। इसी माफीक दुर्गुणीयोंके दोषण छुडानेमे सहजमे छुट सक्ते है परन्तु अगर यह दुर्गुणी हितशिक्षा पर भी गुस्सा करता हो तो उनोके दोष प्रकाशित न करना चाहिये वहा उन दुराचारीयो पर करुणाभाव लाके मध्यस्थपणा ही रखना आत्मकल्याण है।

> सपइ दुसम समए, दीसइ थोवो वि जस्स धम्म गुणो।
> बहुमाणो कायव्वो, तस्स सया धम्म बुद्धिए॥ २५॥

अर्थ—आचार्यश्री फरमाते है कि हे मोक्षाभिलाषीयो।

श्राज यह पचम श्रारा महा दु ग्खमय है पूर्ण चारित्र पालना दुष्कर है उत्तम क्रियावो करना मुश्किल है दुष्कर तपश्चर्य करना श्रति कठिन है कारण प्रथम तो भरतक्षेत्र जिस्मे भी दक्षिणभरत हुन्ड सर्पिणीमे श्रधिक कृष्णपक्षी जीवों कलह कदाग्रही, श्रभिमानी, श्राप स्वार्थी होन पर भी श्रसयति पूजा रूप श्राश्चर्य इस दुष्मकालमे श्रगर कीसी व्यक्तिमे स्वल्प ही धर्म गुण हो जिनोंके हृदयमे शासन निवास करता है श्रन्त करणसे शासन सेवा, धर्मोन्नति श्रादि उत्तम कार्यमें प्रवृति हो तन मन धनसे यथा शक्ति समाज सेवा चाहाता हो तप सयमादि स्वल्प ही गुण हो श्रकृत्य कार्योंसे पराङ्मुख रहता हो कुच्छ भी न हो तो उत्तम कार्योंक श्रनुमोदन करनेका भी गुण हो एसे शासन भक्तोंका धम बुद्धिसे सदैव श्रादर सत्कार वहु मान करना चाहीये कारण इस महा भयकर कलिकालमें एसे मनुष्य भी मीलना वड ही दुष्कर होगा स्वल्प गुणोवाले जीवोंका वहुमान पूर्वक भक्ति करनेवाला भी श्रगम्य पुन्योपार्जन कर भविष्यमे श्रक्षय श्रवाधित सुखोंको प्राप्त कर सकेगा दुसरी वस्तुवो पुन पुन मील सक्ती है परन्तु स्वाधर्मी शासन भक्त मीलना दुष्कर है वास्ते हे भव्य जीवों ! इस कलीकालमे कल्पतरू समान गुणी पुरुषोका वहुमान कर।

> जइ परगन्छि सगन्छे, जे संविग्ग वहुस्सुया मुणिणो।
> तेसिं गुणाणुराय, मा मुच सुपन्छर प्पइश्रो ॥ २६ ॥

श्रर्थ—इस कलिकाल नामा दुषम श्रारेके श्रन्दर हुवा

शान्तिमूर्ति निर्मल चारित्र क्रियापात्र रूपी उज्ज्वल पूर्णिमाके चन्द्रको
क्रूरता बतलानेवाले अनेक गच्छमद, क्रियामद, ममत्व, विद्यामद
आदिरूप धारण करनेवाले स्वच्छन्दी परनिंदा कर भद्रिक जीवों
के कोमल हृदयमें द्वेष—कदाग्रहका बीज बो रहे हैं और चाहे
स्वगच्छके पार्श्वस्थ शिथिलाचारी अपठित क्यों न हो परन्तु वे
गाडरीप्रवाह जो इतर कुशीलमें सहायक बन रहे हैं और
परगच्छके गीतार्थ क्रियापात्र ज्ञानीयोंकी निंदा आशातना करनेमें
तनीकभी विचार नहीं करते हैं इन जीवोंको आचार्य श्री उपदेश
देते है कि हे भव्यात्माओ ! चाहे परगच्छका हो चाहे स्वगच्छका
हो किन्तु जीनोंके अन्दर ज्ञानादि उत्तम गुण हो बहुश्रुत गीतार्थ
और देशकालानुसार क्रिया करनेवाला हो उन महान पुरुषों का
बहुमान विनय भक्ति सेवा कर लाभ उठाना चाहिये इसमें ही तुमारा
कल्याण है अगर स्वगच्छ व परगच्छवालोंमें सामान्यता क्रिया
प्रवृत्तिका किंचित भेद देखनेमें आता हो भी मत्सर भावसे दुसरे
ज्ञानादि गुणोंका अवश्य अनुमोदन करना चाहिये हे भद्र ! क्रियाके
बारेमें तुमको यह विचार करना चाहिये कि भगवान वीर प्रभुके शासन
कि जो रचना किया है और पीछेसे आचार्योंने व्यवस्थापना प्रवृत्त
कर उनकी पालना का मार्ग क्रियाका आग्रह कर उसपर आरूढ हो
गये यद्यपि वीतराग शासन अनेकान्तवादवाला है अगर परके
नयसे अपेक्षा सत्य भी हो सकती है किन्तु हमारा सत्य और
दुसरे गच्छवालों का असत्य हम वीरपुत्र दुसरे वीर दुशमन हम
सम्यक्दृष्टि दुसरे मिथ्यादृष्टि यह विचार करना एक कोमलता हठ—

प्राप्त है इस कथनसे यह सिद्ध होता है कि गुणीजन वहुश्रुत गीतार्थो का बहुमान करनाही आत्म कल्याण का मुख्य साधन है ।

गुणरयण मंडियाणं, बहुमाणं जो करेइ सुद्धमणो ।
सुलहा अन्न भवम्मिय, तस्स गुणा हुंति नियमेण । ७७ ।

अर्थ—हे भव्य अगर तु भवान्तर मे उत्तम गुण प्राप्ती की अभिलाषा रखता हो तो इस भवमे जो महानुभाव गुणरत्नोंसे भूषित याने उत्तम गुणों से मंडित हो ऐसे गुणीजनों का अपने शुद्ध मन से बहुमान करो ताकि वह उत्तम गुण भवान्तर में तुझे सुलभता से मीलेंगे आचार्य श्री यह बात निर्णय पूर्वक कहते है कि इस भवमें जीस गुणों का बहुमान करोगे वहही गुण भवान्तरमें सहजही मे प्राप्त होगा जैसे एक खेट नामके ग्राममे जगदेव नाम ब्राह्मण महान रोगी दालिद्री बसता था उसके विशाल कुटम्ब होनेपर भी दुखमे कोइ भी सहायक नहीं था एक समय अगम सुरतरु महान तपस्वी मुनि उन ब्राह्मण पाडा के अन्दर मे जा रहे थे वह उन रोगी विप्र को देखकर करुणा लाकर उस मुनिदेव के पास गया ब्राह्मणाने पुछा कि हे मुनि ! मेरा रोग और दालिद्र कैसे जा सकता है ? मुनिने कहा कि हे विप्र ! पूर्व भवम कीसी सद्गुणीयों कि आशातना—अवगुण वाद गुप्त निन्दा करने का यह फल है जो जीव शुभाशुभ कर्मोपार्जन करते है उसे प्रदेशो या विपाकसे अवश्य भुक्तनाही पडता है परन्तु तु भवान्तरमे सुखी होना चाहता हो तो एक वीतराग शासन का शरण ले और गुणी जनो का गुण कीर्तन कर ताके तुझे भवान्त

में वीतरागका शासन प्रामी होगा इत्यादि हितशिक्षा दे के मुनि तो वहांसे चले गये ब्राह्मण न गजश्रेष्ठि वह भी ध्यान लगा दिया कि सचमुच वीतराग का शासन और मुनि बड़े ही उपकारी होते हैं जोकि मेरे कुलगुरु ब्राह्मण कोई मेरे पास नहीं आता है मेरी सार सम्भाल भी नहीं लेते हैं परन्तु परमदयालु यह जैनमुनि निस्वार्थी और परोपकारी हैं कि मेरे पास आके मुझे कल्याणका रहस्ता बतलाया है वह दिन मेरा आनन्दकारी होगा कि मैं वीतराग के शासन सम्यक्त्व का स्पर्शन करूं इस भावनामें बिप्रन अपना आयुष्य पूर्णकर भद्रीक परिणामों से राजग्रहनगर के अन्दर धनाढ्य शेठ कि भद्रा सेठाणी के कुक्षीमें पुत्रपणे उत्पन्न हुवा बड़ा महोत्सव के साथ उसका नाम दत्त कुमर दीया जब वह आठ वर्षका हुआ तब उनके घरपर एक जैन मुनि भिक्षार्थ लिये आया था उन मुनिको देख के मतिज्ञानसे विचार करने अनुपयोग लगाते हुवे उस बच्चेको जातिस्मरण ज्ञान हुवा अपना पूर्व भव देखा और उन मुनिको वन्दन नमस्कार कर बोला कि हे प्रभो मैं आपके साथ चलुंगा मुझे वीतराग का शासन प्रीय लगता है मुनि ने कहा कि हे भव्य ! तुमने कहांपर वीतराग शासन कि आराधना की होगा तब उन बच्चेने अपना पूर्व जनमका भव वह सुनाया और विशेष बोला कि हे दयाल ! यह आप मुनियोंकाही प्रभाव है कि मुझे महान् दुःखों से बचाके इस वीतराग शासन का भक्त बनाया है इत्यादि वार्तालाप होते हुवे देख सेठ सेठाणी बहुत खुश हुवे मुनि अपने स्थानपर चले गये 'दत्तकुँवर' शासन का भक्त हुवा बचपणे से मन्दिर जाना मुनियों के दर्शनभक्ति सेवापूजा करना क्रमशः

युवक वय में भी शासन क अच्छे सुन्दर कार्य करता हुवा ससार से निरक्त हो मुनि सुन्दराचार्य क पास दीक्षा ले उग्रविहारी घोर तपश्चया कर कर्मोको दावानल द अन्तमें अष्टकर्म चकचूर कर मोक्ष में अनन्त सुखों क भोगी हुवे इस छोटे से दृष्टान्त स यह समजना चाहिये कि जीव गुणोकी अन्तकरणासे अनुमोदना करत है गुणी जनोका वहुमान करत है वह गुणा भवान्तर म सहजही प्रगट हो सुखी हो जाता है ।

एय गुणानुराय सम्म जो धरइ धरणि मज्झमि ।
सिरि सोमसुन्दर वय, सो पावइ सव्व नमणिज्ज ॥ २८ ॥

अर्थ—उपसहारमे आचार्यश्री फरमाते है कि इस पृथ्वीपर अनगार धारण कर भव्यात्मावो इस गुणानुराग नामका कुलकको श्रवण कर यथामति समजकर अपने कोमल नि शल्य हृदयक अन्दर धारण कर उत्तम गुणी जनोका वहुमान पूर्वक आदर सत्कार सेवा भक्ति करेंगे वह जीव द्रव्यभाव लक्ष्मीयुक्त सौम्यसुन्दरता अथात सोमसुन्दरसूरीके चरणकमल निवासी जिनहर्षगणि महाराज फरमाते है कि गुणानुराग धारण करनेवाला सकल सुरासुर त्रीलोक्य पूजनिय तीर्थंकर पदकों प्राप्त कर सब लोगोंके वन्दनिय होगा याने गुणानुराग तीर्थंकर पद देनवाला है

यह गुणानुराग कुलक नामका ग्रन्थ वालाभाइ ककलभाइ अहमदावादवाला कि तर्फसे सक्षिप्त शब्दार्थ द्वारा प्रसिद्ध हुवा था वह पढनस मुझे वहुत ही अनुराग हुवा उसकी मन

लोहावटमें परिषदोंके अन्दर व्याख्यानमें बाचा था किन्तु अब मरुधर तथा गुजराति भाषामें होनेसे स्वल्प बुद्धिवाले मारवाड़ी लोग पूर्ण लाभ नहीं उठा सके साथमें श्रोताजनों कि भी आग्रह पूर्वक प्रेरणा होनेसे वाचक वर्ग पठनपाठन निमित्त यह हिन्दी भाषान्तर यथामति किया है छद्मस्थोंसे भूल होनेका स्वाभाविक नियम है इस नियमानुसार मतिदोष दृष्टिदोष या मेरी मातृभाषा मारवाड़ी होनेसे भाषादोष रहा हो तो सज्जन महाशय क्षमा करे सज्जनों पूर्वक सूचना करे ताके द्वितीयावृत्तिमें सुधारा करवा दिया जावे

भाषान्तर कर्ताका परिचय—श्री पार्श्वनाथ प्रभुके पाटपर श्री शुभदत्त नामके गणधर हुवे, दुसरे पाट श्री हरिदत्त नामके आचार्य हुवा, तीसरे पाट श्री आर्यसमुद्रसूरि जिन्होंके शासनमें बुद्धकीर्ति साधुसे बौधधर्म प्रचलित हुवा चोथे पाट श्री केशीश्रमणाचार्य जिन्होंने बारह राजावोंको प्रतिबोध कर जैन बनाया पांचवे पाट श्री स्वयप्रभसूरी (विद्याधर) जिन्होंके चरणकमल कि सेवा राजा महाराजा तथा चक्रेश्वरी पद्मावति, अंबिका और सिद्धायिका करती थी इन परोपकारी महात्मावोंने भिन्नमाल नगरमें ९०००० घरोंको प्रतिबोध जैन श्रीमाल तथा पद्मावति नगरीमें ४५००० घरोंको पोरवाल बनाया था छठे पाट विद्याधर कुलभूषण श्री रत्नप्रभसूरी हुवे जिन्होंने ओशीयों—उपकेशपट्टनमें उपलदे राजादि ३८४००० घरोंको प्रतिबोध कर जैन ओसवाल बनाये और श्री चरमतीर्थंकर शासनाधीश वीर भगवानके बिम्बकि प्रतिष्ठा करवाके पवित्र तीर्थ स्थापना करी सातवे पाट पर श्री यक्षदेवसूरी हुवे जिन्होंने राजपुर नगरमें माणिभद्र यक्षको